Date: / /

लोक नाट्य →

हर प्रदेश में साहित्य की अन्य विधाओं की अपेक्षा नाटक की विशेष महत्ता रही है। 'काव्येषु नाटक रम्य' से भी इस कथन की पुष्टि होती है। लोक के लिए नाटक का महत्व और भी बढ़ जाता है, क्योंकि शिक्षित वर्ग का मनोरंजन पुस्तकों को भी पढ़ने से हो सकता है, पर लोक के मनोरंजन का मूल साधन तो लोक नाट्य ही है। लोक नाट्य आडम्बरहीन एक ऐसी विधा है जो विशाल जन के हर्ष व उल्लास का प्रमुख आधार है। प्राचीन उल्लेखों से भी यह ज्ञात होता है कि ब्रह्मा ने वेदपाठ से वंचित लोगों के मनोरंजन के लिए पंचम वेद 'नाटक' की रचना की। आज उस नाटक को ही लोकनाट्य कहा जाता है, जो सभ्यता से दूर रहने वाले ग्रामीणजनों के मनोरंजन का आधार है तथा जिसका पारंपरिक महत्व है। इसके अतिरिक्त इन नाट्यों का स्थानीयता से प्रभावित होना भी आवश्यक है। इनमें प्रादेशिक संस्कृति के तत्व भी मिलते है। लोक नाट्य के संबंध में डॉ. श्यामपरमार का कथन है- लोक नाट्य से तात्पर्य नाटक के उस रूप से है, जिसका संबंध शिक्षित समाज से भिन्न सर्वसाधारण के जीवन से है और जो परंपरा से अपने-2 क्षेत्र के जनसमुदाय के मनोरंजन का साधन रहा है। उत्कृष्ट कोटि का साहित्यिक नाटक भी प्रसिद्धि नहीं पा सकता यदि उसमें लोक के हृदय को छूने की क्षमता न हो। अतः नाटक के प्रयोगों में लोक ही सबसे बड़ा प्रमाण है। नाटक के लिए यह आवश्यक है कि लोक रुचि को आकर्षित करने वाले तत्वों लोक नाटकों का प्रणयन (निर्माण) लोक रुचि को ध्यान में रखकर किया जाता है। लोक नाट्यों के निर्माण में मनोरंजन और नकल करने की भावना का विशेष रूप से हाथ होता है। लोक नाट्य लोक मानस द्वारा निर्मित एक विधा है जिसमें लोक परंपरा व लोक

Scanned with CamScanner

संस्कृति को एक अमूल्य निधि के रूप में संजोकर रखा है। ये नाटक लोकरंजन के सर्वश्रेष्ठ साधन हैं और देश की घटनाओं से ये प्रभावित होते हैं। समाज के वर्ग विशेष की भावनाओं के द्वारा इनमें रस का संचार होता है और लोक भाषाओं के द्वारा इनकी अभिव्यक्ति में अनूठा निखार आता है। हिन्दी नाट्य परंपरा का मूलस्त्रोत यही लोकनाट्य ही हैं जो स्वांग आदि नाम से प्राचीन रूप में अब तक विद्यमान हैं। प्रारंभिक अवस्था में इन लोकनाट्यों की रचना भक्ति भावना एवं धार्मिक भावना को दृष्टि में रखकर की जाती थी। उस समय सामाजिकों के समक्ष आदर्श प्रस्तुतिकरण का प्रश्न ही मुख्य था।

विद्वानों की यह धारणा है कि ख्याल नाम से जाने जाने वाले लोक नाट्यों का प्रारंभ 18वीं शताब्दी के आसपास हो गया था। इनके प्रारम्भ में प्रेरक तत्व कुछ भी रहे हो और इनके प्रचार की परिस्थितियाँ कैसी भी रही हो पर इस संबंध में निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि इन ख्यालों की आरंभिक अवस्था में पौराणिक, धार्मिक एवं वीरताप्रधान कथाओं का ही चयन किया गया। मुस्लिम साम्राज्य एवं तत्कालीन समाज की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए जन-साधारण में चारित्रिक चेतना जागृत रखने के लिए यह आवश्यक था। राजस्थान प्रदेश में हमें निम्न रूप में नाटक देखने को मिलते हैं —

1) तुर्रा कलंगी —

मध्यभारत और महाराष्ट्र में तुर्रा कलंगी का अधिक प्रचलन है। राजस्थान में तुर्रा कलंगी का प्रचार विशेष रूप से मेवाड़ क्षेत्र में घिसुण्डा में है। तुर्रा व कलंगी के दो दल होते हैं। कलंगी का स्थान मंच में ऊपर होता है और तुर्रे का स्थान मंच के नीचे। तुर्रा व कलंगी के दोनो दलों में परस्पर वाद-विवाद होता है।

Date: / /

तुर्रा व कलंगी नाटकों में आध्यात्मिक विषयों की प्रधानता रही है। कलंगी दल वालों का मत है कि कलंगी आदिशक्ति का प्रतीक है और तुर्रा शिव का प्रतीक है। ये लोग तुर्रे की उत्पत्ति भी कलंगी से ही मानते है। इसके विपरीत तुर्रे को ओम शब्द का प्रतीक मानते है। त्रेता युग में यही तुर्रा राम बना और द्वापर में इसे कृष्ण का रूप धारण करना पड़ा तथा कलियुग में इसने तुर्रे के रूप में अवतार लिया है। ये लोग कलंगी को सीता एवं राधा आदि के रूप में स्वीकार करते है। तुर्रकलंगी के मूलभावों का प्रमुख आधार सिद्धों व नाथों की दार्शनिक भावना को स्वीकार किया गया।

2.) **कठपुतली →** कठपुतली नृत्य-नाटक प्राचीनकाल से रंगमंच का एक महत्वपूर्ण अंग रहा है। लकड़ी की बनाई हुई इन कठपुतलियों का संचालन धागों के माध्यम से किया जाता है। परदे के पीछे सूत्रधार बैठा रहता है। आज भारत में राजस्थान ही ऐसा प्रदेश है, जहाँ पर कठपुतलियों के नाटक का सर्वाधिक प्रचलन है किन्तु धीरे-2 यहाँ भी इनका प्रचार कम होता जा रहा है। राजस्थान में इन कठपुतलियों के माध्यम से वीरों के चरित्र को उभारकर साधारणजन के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है। इन कठपुतलियों के खेल में 'अमरसिंह का खेल' सर्वाधिक प्रसिद्ध है। इसके अतिरिक्त मुख्य रूप से कठपुतली नाटक में मुगलकालीन वीरों की कथाओं की झाँकियाँ देखने को मिलती है।

3.) **भांडो व बहुरूपियों के नाटक →** राजस्थान में भांड

जाति के लोग प्रायः प्रत्येक क्षेत्र में मिल जाते हैं। बहुरूपिए भी यहाँ कहीं संख्या में मिल जाते हैं। ये दोनों जातियाँ विभिन्न प्रकार के स्वांग धरते रहते हैं। भांडो की एक विशेषता यह भी है कि ये विभिन्न तरह की मुख-मुद्राएँ बनाकर लोगों को हँसाते रहते हैं। नृत्य की अपेक्षा इनके नाटकों में उछल कूद की मात्रा अधिक होती है। वे विशिष्ट प्रकार की वेशभूषाओं का भी प्रयोग करते हैं। ये लोग प्रायः काली का, सती, हनुमान, कृष्ण आदि का स्वांग भी धरते हैं। ये ही इनके जीवनयापन के साधन हैं।

4.) कामड़ों का तेरहताली नृत्य नाटक →

Imp

इसका प्रदर्शन पुरुषों द्वारा न किया जाकर कामड़ जाति की औरतों द्वारा किया जाता है। स्त्रियाँ मंजीरों को अपने शरीर पर अलग-2 स्थानों पर बाँधकर अनेक प्रकार की कठिन मुद्राएँ, विविध हाव-भावों का प्रदर्शन और कई आंगिक चेष्टाएँ भी करती हैं। तेरह मंजीरों को औरतें दाएँ पाँव पर, पसलियों के नीचे तथा दो हाथों में रखती हैं। अपने हाथों के मंजीरों से अन्य मंजीरों को बजाते हुए नृत्य प्रस्तुत करने वाली स्त्री तेरह प्रकार के भाव नाट्य भी प्रस्तुत करती हैं। ~~नाट्य प्रस्तुत करते समय~~ प्रदर्शन के समय कामड़ पुरुष तानपुरे पर भजन गाते रहते हैं। इस नाटक में कभी तो एक ही औरत नृत्य करती है और कभी-2 चार-पाँच औरतें सामूहिक नृत्य प्रस्तुत करती हैं। नाटक के आरंभ में गणेश वंदना की जाती है। इस समय मुख्य रूप से रामदेव से संबंधित भजन या मीरां, गोरखनाथ, कबीर आदि के रचित भजन गाए जाते हैं। ये कामड़ जाति के लोग रामदेवजी के ही उपासक हैं। नृत्य की समाप्ति पर दोनों हाथों से कांसे की थालियाँ लेकर उन थालियों को नचाया जाता है। इस नृत्य नाटक में निम्न मुद्राएँ प्रस्तुत की जाती हैं -

Scanned with CamScanner

Date: / /

1.) अनाज काटना 2.) अनाज साफ करना 3.) अनाज कूटना
4.) अनाज पीसना 5.) आटा छानना 6.) आटा गूंदना
7.) रोटी बनाना 8.) सूत लपेटना 9.) चरखा चलाना
10.) सिर पर कलश रखना 11.) दही बिलोना
12.) मक्खन निकालना 13.) घी तैयार करना

5.) जसनाथी सिद्धों का अग्नि नृत्य नाटक →

भारतीय सिद्धों के अग्नि नृत्य की पृष्ठभूमि में सिद्धाचार्य, जसनाथ जी एवं रूसतम की कथा का महत्वपूर्ण स्थान है। जसनाथी सिद्धों में ऐसी दंतकथा प्रचलित है कि एक बार सिद्धाचार्य जसनाथ जी अंगीठी पर बैठ गए। उस समय उनकी उम्र एक वर्ष की थी। अंगीठी पर बैठने के बाद भी उनका कुछ न बिगड़ा। उसी भावना से प्रेरित होकर उनके शिष्यों ने भी अपने गुरु की अपार शक्ति के आधार पर अग्नि नृत्य का प्रारंभ कर दिया।

जाता है कि एक बार औरंगजेब ने सिद्ध रूसतम को अपने पास बुलाया। रास्ते में उसने अग्नि का एक कुंड बना रखा था। इस कुंड पर हल्का-सा एक आवरण भी था पर ज्यों ही सिद्ध रूसतम का उस स्थान पर पैर पड़ा तो वे उस कुंड में गिर गए परन्तु अपनी तपस्या के बल से सिद्ध रूसतम सुरक्षित लौट आए। इन कथाओं से नृत्य कर्ताओं का मनोबल ऊँचा होता है। इस नृत्य में छः फुट लंबा, चार फुट चौड़ा एवं तीन-चार फुट ऊँचे माप का अंगारों का ढेर लगाया जाता है। इन अंगारों पर नाचते समय नर्तक ओंकार की ध्वनि उच्च स्वर में करता है और पास में नगाड़े बजते रहते हैं। नृत्य

करते समय नगाड़ों का बजते रहना आवश्यक है। यह नृत्य एक विशेष लय एवं ताल के साथ होता है। इस नृत्य के द्वारा जसनाथी सम्प्रदाय के लोग नाटक के रूप में पूर्व की घटनाओं की नकल उतारते हैं। यह नृत्यनाटक बीकानेर क्षेत्र में अधिक प्रचलित है।

6.) रावळों की रम्मत –

रावळ एक जाति का नाम है। इस जाति के लोग बहुत कम संख्या में हैं। कुछ ही गाँवों में इनके घर पाए जाते हैं। जिनमें बिरई, (नूँदड़ा) नूँदड़ा आदि गाँवों के रावळ अपनी रम्मत के लिए प्रसिद्ध हैं। रावळ राजस्थान में निवास करने वाली जातियों में स्वांग लाया करते हैं। ये स्वांग रातभर चलते हैं। प्रायः रावळ अपनी रम्मत को यजमानों, चारणों के गाँवों में ही मांडते हैं। यद्यपि होलिकोत्सव पर अन्य जातियों के लोग भी स्वांग लाया करते हैं पर प्रदर्शन की जो सफलता रावळों की रम्मत में दिखाई देती है, वैसी अन्य जातियों की स्वांगों में नहीं दिखाई देती है। नकल करने में ये रावळ पूर्ण चतुर होते हैं। ये पात्रानुकूल एवं प्रसंगानुकूल भाषा का प्रयोग करने में भी दक्ष होते हैं। हास्य और कटु व्यंग्य इनकी रम्मत के प्राण हैं। प्रायः रम्मत के स्वांगों में निम्न प्रकार का क्रम रहता है –

1.) बौरे-बौरी रो सांग
2.) अर्धनारी रो सांग (अर्धनारीश्वर का सांग)
3.) मियें रो सांग
4.) बाणियें रो सांग
5.) दर्जी रो सांग
6.) जोगी रो सांग
7.) सूरदास जी रो सांग
8.) कान्ह-गुजरी रो सांग
9.) बीको जी रो सांग

बौरे-बौरी रो स्वांग नृत्य प्रधान स्वांग है। अर्धनारीसांग में पात्र अर्धनारीश्वर का रूप

धारण किए तथा हाथ में तलवार लिए दर्शकों के सामने प्रस्तुत होता है। इस स्वांग का धार्मिक दृष्टि से बहुत महत्व है। इस स्वांग को देखते समय अर्द्ध-नारीश्वर शिव की कल्पना साकार होने लगती है।

इसके पश्चात मियें का स्वांग आता है। बालकों का मनोविनोद इसी स्वांग से ज्यादा होता है। इसकी वेशभूषा, इसके हाव-भाव और क्रियाकलापों को देखकर दर्शक हँसते-2 लोटपोट हो जाते हैं। सामाजिक व्यवस्था एवं जातीय भावनाओं की इस स्वांग में खूब हँसी उड़ायी जाती है। इस स्वांग में हिन्दू संस्कृति के साथ मुस्लिम संस्कृति के तत्व भी देखने को मिलते हैं। '**गाँव धणि री गांवड़ी खेत पराया खाय**' पंक्ति ठाकुरों की सामंतशाही की प्रवृति की ओर संकेत करती है। मियें का स्वांग एक सफल व्यंग्य-हास्य नाटक है।

* *

7.) बालकों द्वारा किए जाने वाले नाट्य→

राजस्थानी लोक-नाट्य में बालकों द्वारा किए जाने वाले नाट्यों का विशेष महत्व है। इन नाट्यों के द्वारा बालक-बालिकाएँ अपने भावी जीवन में प्रवेश पाने का प्रयत्न करते हैं। वे बचपन में ही सांसारिकता की अनुभूतियाँ करना चाहते हैं। अक्षय तृतीया के अवसर पर नन्ही-मुन्नी बालिकाएँ वर-वधू का स्वांग धरती है। एक बच्ची दूल्हा बनती है और एक बच्ची दुल्हन बनती है। वर-वधू की साज-सज्जा के प्रायः सभी उपकरणों का प्रयोग इस समय किया जाता है। जिज्ञासु बाल हृदय इस प्रकार के स्वांगों के माध्यम से यौवन का एवं सांसारिकता का आनंद उठाने हेतु प्रयास करते हैं। इसी प्रकार होली या दीपावली के दूसरे दिन रामा-श्यामा को कोई बालक स्त्रियों

Date: / / Page

के कपड़े पहन लेता है और घूंघट निकालकर अपने परि-
वार की बड़ी-बूढ़ी औरतें के चरण स्पर्श (पगेलागना)
करने जाता है। यह भी एक प्रकार का स्वांग ही है।

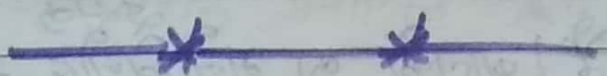

Scanned with CamScanner